मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य में नारी जीवन की समस्याएँ और समाधान

ए.शौकत अली
असोसियेट प्रोफेसर हिन्दी विभाग एस.डी.जी.एस कालेज,**हिन्द्रूपुर**-515201
जिला अन्नतपुरम, आन्ध्र प्रदेश, भारत ।

सारांश

मन्नू भण्डारी के कथा-साहित्य में नारी की समस्याओं का वास्तविक रूप समाज के सामने स्पष्ट करने का एक आयाम रहा है । व्यक्ति के व्यक्तित्व में अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों का महत्व होता है । अतीत उसके मानसिक धरातल में रहता है, जिसमें परंपरा के तत्व निहित रहते हैं, जिनका प्रभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के दौरान पड़ता है । इसलिए परंपरा के तत्व उसके वक्तित्व में अंतर्निहित रहते हैं । वह वर्तमान समय में जीवन जीता है, और भविष्य की कल्पना करता है । साहित्य में भी अतीत, वर्तमान और भविष्य की बातें निहित रहती है । मनुष्य कल्पनाशील प्राणी भी है । इसलिए वह कल्पनात्मक रूपों की भी सृष्टि करता है । व्यक्ति के व्यक्तित्व में अन्य बातों के अतिरिक्त विचार और भावना का भी द्वन्द्व चलता है । विचारों के बदलने से, भावना और भावना के बदलने से विचार परिवर्तित होते रहते हैं । साहित्य में भी विचार और भावना का महत्वपूर्ण स्थान होता है ।

नारी अस्मिता की पहचान और गरिमा के लिए अनेक आन्दोलन होते रहे हैं । उनके सामने आने वाली चुनौतियों को आर्थिक आधार पर विशेष रूप से आंका गया है। सारी लड़ाई का मुख्य प्रयोजन ही यह है कि नारी के लिए एक सुखद भविष्य का निर्माण, निष्पक्ष और न्यायी हो सके । एक बेहतर समाज की कल्पना के लिए उदार दृष्टि की आवश्यकता है किन्तु समाज मे महिलाओं के प्रति एक स्वास्थ दृष्टिकोण को खोजना कठिन है । नि:संदेह यह एक गंभीर समस्या है । समाज सुधारकों ने 19 वी शती में ही अनुभव कर लिया था कि नारी पर अन्यायपूर्ण सामाजिक रूढ़ियों को थोपना उचित नहीं है, वह शिक्ष ग्रहण कर सके अपनी इच्छा से उचित आयु में विवाह कर सके, विधवाएँ पूनर्विवाह कर सके और स्त्रियाँ समाज निर्माण के कार्यों और परिवर्तनकारी योजनाओं में महत्वपूर्ण निर्णय ले सके । यह उसले लिए अहत्वपूर्ण कार्य है ।

मूल शब्द : साहित्य, विवाह, समस्या, समाज, परिवार

प्रस्तावना

मन्नू भण्डारी के कथा-साहित्य में नारी की समस्याँ को प्रस्तुत किया गया है । प्रेम व यौन संबंधी, कामकाजी महिला की एवं विधावा जीवन की पारिवारिक समस्याँ पर विमर्श करना यहाँ उचित होगा । हिन्दी कथा-साहित्य, में पारिवारिक विघटन की बहुविध झाँकियाँ प्रस्तुत करने में सफल रहा है । परिवारिक विघटन की समस्या मूलत: स्वाधीनता के बाद उपजे हुए आर्थिक और सामाजिक सोच के वैषम्य की देन है । स्वस्थ समाजिक वृत्ति की अनुप्रेरणा ही मनुष्य को, परिवार संस्था को निर्मित करने में सहायक सिध्द होती है और उसकी आत्यधिक आत्मोन्मुखता ही परिवार को विघटन के दगार पर ले जाती है । संख्या से जुड़ कर मनुष्य एक-दूसरे के अस्तित्वों की सुरक्षा की गारन्टि देते और लेते हैं, लेकिन इसी सीख्या के किसी सदस्य या किन्ही सदस्यों की आत्यधिक आत्म-केन्द्रित होने की प्रवृत्ति उसे पारिवारिक विघटन की ओर ले जाती है । मनुष्य को आत्म-केन्द्रित बनाने में उसके निज के अहम् का सर्वाधिक योगदान रहता है ।

पारिवारिक समस्याएँ

स्वाधीनोत्तर भारत का मध्यवर्गीय परिवार जहाँ आर्थिक उत्तरदायित्वों को पूरा करने के लिए या फिर अपने-अपने अस्तित्वों की अलग पहचान बनायो रखने के लिए पति-पत्नी दोनों ही काम करते हैं – वहाँ यह परवारिक-विघटन अत्यधिक भयंकर रूप में देखने को मिलता है । इसी परिवारिक विघटन का कारण है कि “घर अंदर ही अंदर खण्ड़ित

हो रहे है।"[1] इन छत बनाने वालों की अत्यधिक प्रभुसत्ता और आतंक का परिणाम है कि "पिता का अस्तित्व एक विशालकाय बुलन्द दरवाजे की तरह उसे निहायत और दयनीय बना रहा है ।"[2] "ये विवाह आदि ऐसे वैयक्तिक निर्णय बलात् संतान पर आरोपित कर रहे हैं ।"[3] पुरानी पीढ़ी की प्रभुसता के विरोध में नई पीढ़ी आवाज उठा रही है । लड़की भी अपने वैयक्तिक जीवन में पिता का प्रतिबंध सहन करने को तैयार नहीं ।"[4]

नौकरी पेशा लड़कियों की अपनी इच्छा से विवाह कर उसकी सूचना मात्र देकर ही अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेती है । परन्तु "कई पुत्रियाँ तो बिना विवाह किए ही अपने घरवालों के खिलाफ पुरुषों के साथ रहती है ।"[5] ऐसी स्थिति से स्पष्ट होता है कि पुरानी पीढ़ी की नई पीढ़ी को प्रतिबन्धित करने का प्रयास व्यर्थ सिध्द हो रहा है । सियुक्त परिवार में अलगाव की प्रवृत्ति बढ़ रही है । कहने को बड़ा परिवार है। वृध्द माता उनका विवाहित पुत्र और उसकी पत्नी, दो अविवाहित पुत्र तथा अविवाहित पुत्री और देवरानी, इन सब पर अम्माजी का व्यक्तित्व हावी है और सभी इससे मुक्ति चाहतें हैं । "सभी अपने-अपने में स्यस्त कोई किसी से आपसी संबंध नहीं जोड़पाता है और जो कुछ जुड़ना भी चाहते हैं पर निभा नहीं पाते।"[6]

"अतिवैयक्तिकता की जोड़ो की अधिक गहराई के दारण नई पीढ़ी ने अपने उत्तदायित्व को भुला दिया है, युवक बीमार भाई, अँधीमाँ, रिटायर्ड बाप और विवाहित बहन की जिम्मेदारी को षडयंत्र मानता है।"[7] एक भाई को झूठे गबन के आरोप में सस्पेंड किये जाने पर दूसरा भीई उसके परिवार एवम् बच्चों की जिम्मेदारी को निभाना नहीं चाहता । विवाह होकर माँ बोटी की कमाई खाती है । पुरानी पीढ़ी के अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार के कारण भी संतान संतुष्ट नहीं हो पा रही है । सीतान को जन्म देते हैं पर उसके प्रति अपने कर्तव्यों से बचना चाहतें हैं ।

प्रेम व यौन संबंधी समस्याएँ

मानव जीवन में प्रेम, सेक्स और विवाह महत्वपूर्ण अंग है । "सेक्स और जीवन का जन्म एक साथ हुआ और वे एक-दूसरे से अभीन्न है । सेक्स ही सहज प्रवृत्ति जीवन के गति-चक्र में सहजही शक्तिशाली प्रेरक तथा आगे बढ़ने वाली शक्ति रही है ।"[8] भारत में भी धर्म, अर्थ, काम मोक्ष चार पुरुषाथों में इसकी गणना की जाती है । सेक्स व्यापक अर्थों में हमारे जीवन का संचालक भी है । हेवर्लाक एलिस, फ्रायड जैसे प्रसिध्द मनोविश्लेषकों ने सेक्स को व्यापक अर्थों में ग्रहण किया है हेवर्लाक एलिस यह मानते है कि "यौन जीवन सम्पूर्ण व्यक्ति में परिवर्तित है, और मनुष्य की यौन बनावट उसकी आमान्य बनावट का एक अंग है ...मनुष्य वही है जो उसका सेक्स है ।"[9] फ्रायड ने यौन शब्द के अर्थ की चर्चा करते हुए लिखा है कि इसका सबसे पहला अर्थ है " अनुचित अर्थात जिसकी चर्चा करनी नहीं चाहिए ।"[10] वे यौन की परिभाषा करते हुए आगे लिखते हैं कि "यौन वह चीज़ है जिसमें लिंगभेच, आनंददायक उत्तेजना और परितृष्टि, प्रजनन कार्य, अनुचित की धारणा और छिपाने की आवश्यकता संबंधी बातें सब इक्कठी आ जाती है ।"[11]

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सेक्स के तो प्रमुख कार्य है । एक प्रजनन और दूसरा सुख । जैविकी आवश्यकता के रूप में सेक्स एक आवश्यकता रही है, जिसके लिये मानव ने विवाह को माध्यम बनाया है, परन्तु वासना की तृप्ति के लिये इसका उपयोग सामाजिक और नैतिक दृष्टि से विवादास्पद रहा है । सेक्स का उदात्तीकृत रूप भी प्रेम का रूप ग्रहण कर लेता है, जिसमें त्याग बलिदान, श्रध्दा, उत्सर्ग आदि का समावेश हो जाता है। प्रेम का यह रूप भी सेक्स के अन्तर्गत ही आता है ।

प्रेम को सेक्स से भिन्न माना गया है । इस प्रेम का संबंध भी मानव सेक्स जुड़ा हुआ है । स्टीफेंस ने प्रेम को सेक्स से भीन्न मानते हुए लिखा है कि "प्रेम की निष्पत्ति सेक्स समागम के रूप में करना प्रेम को नष्ट कर देना है । स्थायी रहने के लिये प्रेम को विवाह और सेक्स से मुक्त रहना चाहिये ।"[12] सेक्स और प्रेम के भेद संबंध में राधाकृष्णन ने लिखा है जब प्रेम की स्वाभाविक मूल प्रवृत्ति का मार्गदर्शन मस्तिष्क और हृदय,बुध्दि और विवेक करते हैं, तो उसका परिणाम प्रेम होता है । "प्रेम न तो रहस्यामयी आराधना है और न ही पाश्विक भोग । वह सर्वोच्च भावों के मार्गदर्शन के अधीन एक मनुष्य के प्रति दूसरे मनुष्य का आकर्षण है ।"[13] जोभी हो भारतीय सामाज की प्रारम्भिक अवस्था को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि नारी की समाज-संबंधी भीन्न अवधारणा है, जिसमें सेक्स, प्रेम और विवाह आते हैं और पुरुष की समाज संबंधी भिन्न अवधारणा जिसमें समाज की आर्थिक बुनियाद निर्भर करती है ।

कामकाजी महिला की समस्याएँ

देश की राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक परिस्थतियों में जितनी तेजी से परिवर्तन आया है, उससी नारी को घर से बाहर निकलने, शिक्षा प्राप्त करने तथा स्वयं को अभिव्यक्त करने के विपुल अवसर मिले हैं । बढ़ती महंगाई के कारण परिवार की आवश्यकताएँ प्राय: यही समझा जाता था । रजनीतिक एवम् सांस्कृतिक चेतना और बढ़ते हुए

आर्थिक दबाव ने नारी तथा समूचे समाज के चिंतन को परिवर्तित किया है । यही कारण है कि युवा पीढ़ी के साथ-साथ पुरानी पीढ़ी भी नारी के कामकाजी होने की पक्षधर है । कामकाज को लेकर किसी पीढ़ी की अपनी प्राथमिकताएँ या शर्ते नहीं है । 'जो भी नौकरी मिले, उसे सहज भाव से स्वीकार करलो' – यह सिध्दान्त उन पर प्राय: हावी रहता है । इसलिए विवाहित-अविवाहित महिलाएँ तथा नवजात शिशुओं की मताएँ भी कमर कस कर पुरुषों की अर्जन दुनिया में आ खड़ी हुई है । स्पष्ट है कि सहिलाओं के आर्थोपार्जन् के मूल में उन्की व परिवार की सहमती न्यूनाधिक मात्रा में अवश्य रहती है ।

आर्थिक स्वावलम्बन की दृष्टि से नारी के रूपों के आयामों को दो रह से देखा जा सकता है । एक पति-पत्नी एवम् परिवारिक संबंधों में आये तनाव एवं द्वन्द्व के माध्यम से और दूसरे नारी के व्यक्तित्व पर पड़े प्रभाव के माध्यम से । भारत में नारी आर्थिक दृष्टि से स्वावमम्बी होने के बावजूद भी परिवार से जुड़ी हुई है । आर्थिक स्वावलम्बन से उसे परिवारिक परंपराओं, रुढियों, प्रथाओं, मान्यताओं एवम् मर्यादाओं से पूर्णतया मुक्ति नहीं मिली है । नारी की आर्थिक विडम्बना को उजागर करनेवाली मन्नूजी की "क्षय", "नई नौकरी", "रानी माँ का चबुतरा", कहानियाँ है । "यही सच है कि नायिका दीपा का नौकरी में चुनाव निशीथ की सिफारिश से होता है।"[14] इस प्रकार बिना भ्रष्टाचार और सिफारिश के कहीं कुछ होता नहीं । "इस बेकारी के कारण एक जगह खाली होती है तो पचासों टूट पडते हैं । हमारे देश में इन्सान की जान बड़ी सस्ती है । आदमी साठ रुपये की खातिर अपनी जान जोखिम में डाल देता है ।"[15] यही मुख्य वजह है कि पड़े लिखे डॉक्टर, वैज्ञानिक, तथा इन्जनियर्स विदेश जाने को लालयित है । यहाँ कोई भविष्य नहीं है इन लोगों का-आजकल मैरिट को कोई नहीं पूछता आज डिग्री की कीमत दो कौड़ी की ही है । यह कथन बेकारी की स्थिति और कारण को स्पष्ट करता है ।

विधवा नारी की समस्याएँ

"प्राचीनकाल में प्राय: सभी उच्च कुलीन साध्वियाँ वैधव्य की अनुमरण पसंद करती थी। ब्राह्मणी के अनुस्मरण का उदाहरण है ।"[16] उस समय एक पुरुष की अनेक पत्नियाँ होती थी । "पति की मृत्यु के बाद वे सभी विधवा हो जाया करती थी। किन्तु अनुमरण का अधिकार केवल जेष्ट को होता था । विधवा माता का परिपालन न करने वाला पुत्र निंदयीय माना जाता था ।"[17] उअस समय की मान्यता थी- "वैधव्य पूर्व जन्म के पाप का फल है ।"[18] यह नारियों की वैधव्य संबंधी धारणा थी । विधवायें सर्व कल्पाण वर्जिता मानी जाती थी ।"[19] विधवा लेनदेन का व्यवहार अनुचित माना जाता था । किन्तु समाज में अनादर नहीं था । विधवा भगिनी का पालन पोषण का भार भाई पर रहता था । युध्द में मृत सैनिकों की विधावाओं के प्रति सभी के मन में सहानुभूति पायी जाती थी ।

भारतीय समाज में विधवा नारी का मान समान है । लेखलों एवम् लेखिकाओं और कवियों ने विधवाओं को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा है । किसी ने उसकी पवित्रता एवम् पुनीतता की सराहना की है, तो किसी ने उसके भरे यौवन पर अनेक प्रश्न चिह्न लगाये है, सच तो यह है कि विधवा नारी की भी अपनी कामनायें होती है और यदि वे स्वयं सीमा रेखाओं में बाँधना चाहे तो भी समाज होता था, जो उन्हें ऐसा नहीं करने देता । असामाजिक तत्वों से कटती बचती विधावा नारी कहीं-कहीं ऐसे जालों में फँस जाती है, जिससे निकल पाना उसके लिए असंभव होता है । वैदिक ग्रंथों के अध्ययन से पता चलता है कि वैदिककाल में विधावा विवाह का प्रचलन था । विधवाएँ अपने देवर या अन्य व्यक्ति से विवाह कर सकती थी । स्मृतिकाल की श्रुतियों से विदित होता है कि विधावाएँ दो परिस्थितियों में पुर्नविवाह कर सकती थी, एक तो तब जब युवती को बिना विवाह संस्कार के कोई बलपूर्वक उठा ले गया हो या विवाह के बाद यौन संबंध होने के पूर्व ही पति की मृत्यु हो गई हो । इसके अतिरिक्त उस काल में बाल-विवाह को पुर्नविवाह की आज्ञा थी । धीरे-धीरे वह प्रथा समाप्त हो गई ।

निष्कर्ष

भारतीय पुर्नजागरण के दौर में समाज सुधारकों और साहित्यकारों ने मात्र भोग्या और वस्तु समझी जानेवाली नारी को एक सामानजनक स्वरूप प्रदान करने की पहल की । राष्ट्रीय आंदोलन ने नारी के शक्ति और क्षमता को विस्तार प्रदान किया। शिक्षा प्राप्ति तथा स्वतंत्र चेतना के उदय के साथ ही नारी ने स्वयं को समाज की मुख्यधारा का एक हिस्सा मसझा । भारतीय समाज में अनेक व्यापक परिवर्तन हुए । द्वितीय विश्वयुध्द की विभीषिका और भारत विभाजन की त्रासदी के बाद स्वतंत्र हुए भारत में पुराने मूल्य और परंपराएँ चरमराने लगी थी| सहित्यकारों ने इस संक्रमक और संघर्षशील स्थिति को बड़ी सूक्ष्मता और गहराई के साथ अभीव्यक्त किया । संयुक्त परिवार प्रथा के विघटन और गाँवों से घहरों की और निष्क्रमण ने नारी को नयी भूमिका प्रदान की । शिक्षा, स्वचेतना का विकास पश्चिमी स्भ्यता और संस्कृति के प्रभावने उसके अस्तित्व को एक नयी करवट दी । औद्योगिकरण और भौतिकता ने स्वार्थवृत्ति और

आत्मकेन्द्रीकरण को बढ़ावा दिया- फलत: नारी के सामने कुछ दायित्व विवशता से आये और कुछ प्रतिक्रियावश, परंपरा आधुनिकतावादी परिवर्तनों के टकराव की भूमिका यहाँ आरंभ होती है ।

धीर धीरे नारी को राजनीति में प्रवेश मिला अवश्य किन्तु उसने वहाँ भी जिद्द से घुसपैठ की है, वहाँ उसका प्रतिशत बहुत कम है । नारी की सामाजिक स्थिति परिवार की भीतरी संरचना में गुँथी हुई है, माँ-बहन-गृहणी-पत्नी-पुत्री के रूप में वह परिवार की महत्वपूर्ण ईकाइ के रूप में है, और समाज में अपनी बौध्दिक, क्षमताओं और प्रतिभा को स्थापित करने के लिये कटिबध्द है । उसकी स्वाभिमानी चेतना और मुक्ति की छटपटाहट ने नारी आंदोलन को सशक्त वाणी दी है ।

संदर्भ सूचि

1. मन्नू भण्डारी : एखाने आकाश नाई, त्रिशंकु तथा अन्य कहानियाँ । पृ.125
2. मन्नू भण्डारी : छत बनाने वाले, एक प्लेट सैलाब । पृ. 55
3. मन्नू भण्डारी : छत बनाने वाले, एक प्लेट सैलाब । पृ. 57
4. मन्नू भण्डारी : त्रिशंकु, कहानी संग्रह । पृ. 45
5. मन्नू भण्डारी : एखाने आकाश नाई, त्रिशंकु कहानी संग्रह । पृ. 125
6. मन्नू भण्डारी : एखाने आकाश नाई, त्रिशंकु कहानी संग्रह । पृ. 127
7. मन्नू भण्डारी : रेत की दिवार, त्रिशंकु, तथा अन्य कहानियाँ, कहानी संग्रह । पृ. 82
8. डॉ. प्रमिला कपूर : विवाह, सेक्स और प्रेम । 179
9. हेवर्लाक एलिस : यौन मनोविज्ञान (अनु. मन्मथनाथ गुप्त)। पृ. 19
10. मनोविश्लेषण : (भाग -1, अनु. देवेन्द्रकुमार वेदालंकार । पृ. 276
11. मनोविश्लेषण : (भाग -1, अनु. देवेन्द्रकुमार वेदालंकार । पृ. 277
12. डॉ. प्रमिला कपूर : विवाह, सेक्स और प्रेम । पृ. 46
13. डॉ. प्रमिला कपूर : विवाह, सेक्स और प्रेम । पृ. 49
14. मन्नू भण्डारी : रेत की दिवार, त्रिशंकु, तथा अन्य कहानियाँ, कहानी संग्रह । पृ. 135-36.
15. मन्नू भण्डारी : यही सच है, यही सच है तथा कहानियाँ । पृ. 129
16. डॉ. प्रमिला कपूर : विवाह, सेक्स और प्रेम । पृ. 135
17. मन्नू भण्डारी : एखाने आकाश नाई, त्रिशंकु कहानी संग्रह । पृ. 134
18. मन्नू भण्डारी : यही सच है, यही सच है तथा कहानियाँ । पृ. 115
19. मन्नू भण्डारी : त्रिशंकु, कहानी संग्रह । पृ. 59.

- - -